R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मूल्य–7 रुपये, वर्ष–23, अङ्क–4 अप्रेल 2023

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ०प्र०) का

मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

जन्म – 25 मई 1935 देहवियोग – 26 मार्च 2023

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ

मैं हूँ अपने में स्वयं पूर्ण, पर की मुझ में कुछ गन्ध नहीं।
मैं अरस अरूपी अस्पर्शी, पर से कुछ भी सम्बन्ध नहीं॥
मैं रंग-राग से भिन्न, भेद से भी मैं भिन्न निराला हूँ।
मैं हूँ अखण्ड चैतन्यपिण्ड, निज रस में रमनेवाला हूँ॥
मैं ही मेरा कर्त्ता-धर्त्ता, मुझ में पर का कुछ काम नहीं।
मैं मुझ में रहनेवाला हूँ, पर में मेरा विश्राम नहीं॥
मैं शुद्ध, बुद्ध, अविरुद्ध, एक, पर-परिणति से अप्रभावी हूँ।
आत्मानुभूति से प्राप्त तत्त्व, मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ॥

विभिन्न मुद्राओं में

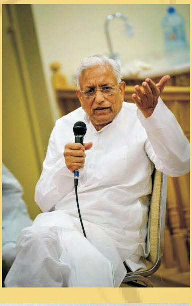

मङ्गलायतन

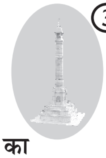

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-23, अङ्क-3 (वी.नि.सं. 2549; वि.सं. 2080) अप्रेल 2023

करता रहूँ गुणगान...

करता रहूँ गुणगान, मुझे दो ऐसा वरदान।
तेरा नाम ही लेते-लेते, इस तन से निकले प्राण ।।टेक ।।

तेरी दया से मेरे भगवन्, मैंने ये नरतन पाया।
तेरी सेवा में बाधाएँ, डालें जग की ये मोह माया ।।
इसलिए अरज करता हूँ, हो सके तो देना ध्यान ।।1 ।।

क्या मालूम कब कौन किस घड़ी, आयु कर्म विनश जाए।
मेरे मन की इच्छा मेरे, मन ही मन में न रह जाए ।।
मेरी इच्छा पूरी करना, मेरे महावीर भगवान ।।2 ।।

चंदना और द्रौपदी के जैसी, दुख सहने की शक्ति दो।
विचलित न होऊँ तेरे पथ से, ऐसी मुझे अनुरक्ति दो ।।
तेरी ही सेवा में, इस जीवन की हर शाम ।।3 ।।

साभार : मङ्गल भक्ति सुमन

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़
स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़

सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन

सह सम्पादक
पण्डित सुधीर जैन शास्त्री, मङ्गलायतन

सम्पादक मण्डल
ब्रह्मचारी पण्डित ब्रजलाल शाह, वढ़वाण
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून

सम्पादकीय सलाहकार
पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, मङ्गलायतन

इस अङ्क के प्रकाशन में सहयोग—

श्री पी. के. जैन

रुड़की

शुल्क :
एक प्रति : 07.00 ₹
आजीवन (15 वर्ष) : 1000.00 ₹

क्या - कहाँ

देशव्रतोद्योतनम् 5
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल................ 13
पूज्य गुरुदेवश्री के...................... 14
अब हम सबको......................... 15
तत्त्ववेत्ता की तत्त्वसभा................ 17
संकल्प................................. 18
समन्वय के पाँच सूत्र.................. 19
छोटे दादा 20
आदरणीय दादाजी द्वारा.............. 20
आदर्श गुरुवर.......................... 21
श्रेष्ठ कलाकार डॉ. भारिल्ल.......... 22
श्री समयसार नाटक.................. 23
श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान............. 27
जिस प्रकार–उसी प्रकार............. 29
समाचार–दर्शन........................ 30

श्री पद्मनंदी आचार्य कृत श्री पद्मनंदी पंचविंशतिका के
देशव्रतोद्यन नामक अधिकार पर सत्पुरुषश्री कानजीस्वामी का प्रवचन

देशव्रतोद्योतनम्

(प्र० भाद्रपद सुद १, गुरुवार, ता० १८-८-५५)

ज्ञान दान की महिमा का वर्णन किया जा रहा है—

गाथा-१०

व्याख्या पुस्तकदानमुन्नतधियां भव्यात्मनां।
भक्त्या यत्क्रियते श्रुताश्रयमिदं दानं तदाहुर्बुधा॥
सिद्धोस्मिञ्जननान्तरेषु कतिषु त्रैलोक्य लोकोत्सवः।
श्रीकारितप्रकटिकृताखिल जगत्कैवल्यभाजोजना॥१०॥

धर्मात्मा को सर्वज्ञदेव के प्रति बहुमान आता है।

सर्वज्ञदेव द्वारा कहे हुए शास्त्रों का भक्तिपूर्वक व्याख्यान करना ज्ञानदान है। जिसे सच्चा ज्ञान प्राप्त हुआ हो, ऐसे मुनि को ज्ञान की प्रभावना करने का भाव आये बिना नहीं रहता। केवलज्ञानी पूर्ण हो गये हैं; इसलिए उनके विकल्प नहीं होता है। मिथ्यादृष्टि को ज्ञान स्वभाव का माहात्म्य नहीं है। केवलज्ञान तीन काल-तीन लोक को जानता है, वह ज्ञान आत्मा से होता है। यह कथन केवलज्ञानी के शास्त्र का है; न कि भगवान के नाम पर बनाए हुए शास्त्रों का। चिरायते की थैली पर मिसरी नाम लिखने से मिठास नहीं हो जाती; उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि के शास्त्र पर भगवान का नाम लिख दे तो नहीं चले।

ज्ञानी को सर्वप्रथम सर्वज्ञ के शास्त्र का निर्णय करना चाहिए। सर्वज्ञ की वाणी में पूर्वापर अविरोध होता है। एक तरफ तो ऐसा कहे कि केवलज्ञानी ने जो देखा होगा, वही होगा और ऐसा निर्णय स्वसन्मुख होकर सर्वज्ञस्वभाव का निर्णय-करने पर होता है, उसी में सच्चा पुरुषार्थ है और दूसरी तरफ यह कहा जाता कि निमित्त आए तो कार्य हो अन्यथा नहीं तो इस प्रकार कहने वाले यथार्थता को नहीं समझते।

धर्मी जीव को सर्वज्ञ के प्रति बहुमान आता है। आचार्य कुंदकुंददेव को भी भगवान के दर्शन का विकल्प आया, ''हे नाथ, भरतक्षेत्र में आपका वियोग हुआ, यहाँ केवलज्ञानी नहीं हैं।'' उन्हें अन्तर में भक्ति का भाव हुआ; पुण्य योग था, इसलिए सीमंधर भगवान के दर्शन मिले और विदेह में ८ दिन रहे। वे अपने समय के मुख्य आचार्य थे, वे समझते थे कि मेरे ऊपर जैन शासन का महान् उत्तरदायित्व है, ऐसा विचारते हुए उन्हें परमात्मा का विरह लगता था।

आदिनाथ भगवान के निर्वाण के अवसर पर भरत चक्रवर्ती के भी आंसू आ गये।'' अहो, भरतक्षेत्र में केवलज्ञान का सूर्य अस्त हो गया! अहा, अब तक प्रश्नों का समाधान होता था, प्रत्यक्ष भक्ति करते थे, अब परोक्ष भक्ति करेंगे।'' इन्द्र, भरत को सान्त्वना देता है, तब भरत कहता है कि मैं वास्तविकता जानता हूँ, किन्तु रागभाव है, इसलिये आंसू आ जाते हैं, भक्ति का भाव आये बिना नहीं रहता।

शास्त्र का भक्तिपूर्वक व्याख्यान ज्ञानदान है।

सर्वज्ञदेव के शास्त्र का भक्तिपूर्वक व्याख्यान करना ज्ञानदान है। मुनि ऐसा ज्ञानदान करते हैं। वे स्वभाव का मंथन करते हैं, और अशुभ दूर हो जाता है। लोग इसे समझें तो अच्छा हो, ऐसा राग होता है। सम्यक्दृष्टि और श्रावक भी ऐसा व्याख्यान दे सकते हैं। जिस व्याख्यान से जगत की शंका दूर हो, वैसा व्याख्यान करना ज्ञानदान देना है।

साधर्मी को पुस्तक दान भी ज्ञानदान है।

साधर्मी निर्धन हो, किन्तु विशाल बुद्धिवाला हो, अनेकान्त का मर्म समझता हो, वह सत्य को समझता है; इसलिए धर्मात्मा उसे पुस्तक देता है। उसकी स्वभाव की तरफ दृष्टि है, वह अशुभ से बचता है और पुस्तक का प्रचार करता है। धर्मात्मा भव्य जीवों को धर्म प्रचारार्थ कम मूल्य में भी पुस्तकें बेचता है, यह भी ज्ञानदान ही है। स्वयं को रागरहित श्रद्धा-ज्ञान का दान मिला है, इसलिए श्रावक को शुभराग आता है। अहो! धर्मी जीव इस

प्रकार शास्त्रों का पठन-पाठन करे; इसलिए पाँच रुपये की पुस्तक दो रुपयों में देता है। जिसे सम्यक्ज्ञान की रुचि है, उसे सम्यक्ज्ञान के प्रचार का भाव आये बिना नहीं रहता, तथापि उसे पुण्य ही समझता है। स्वभाव की एकता हो, वह कल्याणकारी है। मुनि को भी ज्ञानदान का भाव आता है। श्रावक, शास्त्रदान करते हैं किन्तु आज कल तो धनी भी सस्ती पुस्तक चाहते हैं, ऐसी वृत्ति धर्मात्मा नहीं करते। जिसकी दृष्टि स्वभाव पर है, उसे दान का शुभराग होता है।

इस शुभराग से ऐसे केवलज्ञान की प्राप्ति होती है, जिसकी तीन लोक के जीव उत्साहपूर्वक भक्ति व आराधना करते हैं व जिससे तीन लोक के पदार्थ हस्त-रेखा के समान प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होते हैं। श्रावक को ज्ञान की महिमा का भान हो गया है, वह अशुभ टालता है, शुभ करता है और फिर क्रमशः शुभ को टालकर केवलज्ञान प्रगट करेगा, ऐसा श्रावक ही शास्त्रदान करता है और उससे परम्परा से केवलज्ञान की प्राप्ति होगी। तीर्थंकर के कल्याणक तीन लोक के लिए उत्साह के कारण हैं, इसलिए श्रावक का ज्ञानदान मुख्य कर्तव्य है।

आत्मभानपूर्वक ज्ञानदान करनेवाला श्रावक केवलज्ञान प्राप्त करेगा।

भावार्थः—यह अधिकार श्रावक धर्म का उद्योतन अर्थात् प्रकाशनवाला है। सर्वज्ञ भगवान ने एक समय में तीन काल और तीन लोक जाना है, ऐसे मार्ग की श्रावक को महिमा आती है, उसकी श्रद्धा भी रहती है और आगे बढ़ने पर आंशिक शांति प्राप्त होती है। उसे शुभराग कैसे होता है? इस प्रकरण में ज्ञानदान का कथन चलता है। धर्मात्मा श्रावक, शास्त्र का व्याख्यान करते हैं किन्तु व्याख्यान तो विशिष्ट ज्ञानी ही कर सकता है। आत्मा का स्वभाव क्या है? इत्यादि विभिन्न प्रकार से विचार करनेवाला व्याख्यान करता है। जिसे धर्म का ज्ञान है, अधर्म का विवेक है, पुण्य-पाप, स्वभाव से विपरीत भाव हैं और शुद्ध चैतन्यस्वभाव में अनन्त शक्ति है—ऐसे भानपूर्वक स्वभाव-बुद्धिवाला श्रावक अपने को स्वयं ही ज्ञानदान

करता है और दूसरों को भी देता है। जिनसे यथार्थ ज्ञान की प्रभावना हो और दूसरों के यथार्थ ज्ञान की दृढ़ता हो—ऐसे शास्त्र धर्मात्मा लिखते हैं और पठन-पाठन करते हैं। ऐसे ज्ञान का दान करनेवाले श्रावक को केवलज्ञान की प्राप्ति होती है। इसलिए हित चाहनेवाले भव्य जीवों को उत्तम दान अवश्य करना चाहिए। अपना ज्ञानस्वभाव शक्तिवान है, उस शक्ति में से केवलज्ञान विकसित होता है। ऐसी स्वभावोन्मुखता की खबर जिसे है, उसे इच्छा होती है कि सब प्राणी वीतरागी स्वभाव की रुचि प्राप्त करें। ऐसे भाव में तीर्थंकर-नामकर्म की प्रकृति का बंध होता है, इतना होते हुए भी वह शुभराग को हेय समझता है। बारम्बार स्वाध्याय करना, विचार करना चाहिए। आत्मा क्या है? विकार क्या है? सुख-दुःख का कारण क्या है? संयोग क्या है? इस प्रयोजनभूत बात का अनन्त काल से ज्ञान नहीं है, इसलिए ये संसारी जीव संसार में भटक रहे हैं।

तत्त्वविचारपूर्वक रोजना दो चार घण्टे स्वाध्याय करे, उसका दिन सफल है। आत्मा का भान करके एकाग्र होना ध्यान है। ध्यान सबसे उत्तम है, फिर स्वाध्याय उत्तम कहा गया है; इसलिए बार-बार स्वाध्याय करना चाहिए। ये संयोग छूट जायेंगे, यह शरीर यहीं पड़ा रहेगा; इसलिए आत्मा क्या है—इसका ज्ञान और ध्यान बिना जिसका जीवन व्यर्थ ही बीता जा रहा है, वह श्रावक नहीं कहलाता।

देखो! भगवान् के विरह में मुनि भी भक्तिपूर्वक उल्लसित हो जाते हैं, उन्हें जहाँ-तहाँ भगवान् ही दिखाई देते हैं।

जिनेन्द्र भगवान की पूजा करनी चाहिए। भगवान के विरह में प्रतिमा का दर्शन, पूजन करने चाहिये। मुनि भी भगवान के विरह में खेद करते हैं; उनकी भक्ति प्रगट होती है कि हे नाथ!

''चलते फिरते प्रगट प्रभु देखूँ रे!
मेरा जीवन सफल तब लेखूँ रे।''

धर्मात्मा, परमात्मा को पुकारते हैं। परमात्मा कहाँ विराजता है, ऐसी

खटक लगी रहती है। हे भगवान! यह आकाश में सूर्य है किन्तु मुझे तो ऐसा लगता है कि जब आप मुनिदशा में थे, उस समय आत्मा में लवलीन हो गये और ध्यान करने लगे, तब ध्यानाग्नि प्रगट हुई और राग के अभावरूप वैराग्य की हवा चली, आठों कर्म जलने लगे और उनमें से एक अंगारा इस सूर्य के रूप में प्रगट हुआ। अज्ञानी जीव को स्त्री, संतान, कुटुम्ब आदि के स्वप्न आते हैं और उनके कषाय की होली सुलगती है और मुनियों को हलते-चलते जहाँ देखो वही भगवान ही दिखाई देते हैं। ध्यानरूपी अग्नि जली, तब उसमें कर्म जलने लगे, उसमें से एक चिनगारी ने सूर्य का रूप धारण किया।

मुनि आगे कहते हैं:-हे भगवान! आपके जो काले बाल दिखाई देते हैं वे, आपने अपने कर्म जलाये उनका धुआँ मालूम देता है। इसप्रकार धर्मी, सूर्य और बालों में भगवान को देखते हैं। श्रावक, जिनेन्द्र भगवान को देखते हैं। श्रावक, जिनेन्द्र भगवान की पूजा, गुरु की सेवा करते हैं। जीवों को जिनेन्द्र भगवान के शास्त्रों का स्वाध्याय करना चाहिए। जो नहीं करता है, उसको कान और मन नहीं मिले हैं। आत्मभानवाले साधक को भगवान की भक्ति, स्वाध्याय, चर्चा आदि करने का भाव आता है।

गाथा-११

सर्वेषामभयं प्रवृद्धकरुणैर्यद्दीयते प्राणिनां।
दानं स्यादभयादि तेन रहितं दानत्रयं निष्फलम्॥
आहारौषधशास्त्रदानविधिभिः क्षुद्रोगजाड्याद्भयं।
यत्तत्पात्रजने विनश्यति ततो दानं तदेकं परम्॥११॥

समस्त प्राणी आत्मा हैं—ऐसा समझकर उन्हें दुःख न देने का भाव अभयदान है।

धर्मात्मा को भव्य अर्थात् योग्य जीवों के प्रति करुणा उत्पन्न होती है। मुझे दूसरे को दुख नहीं देना चाहिए, आत्मा के प्रति अभय रुचि हुई, इसलिए सब प्राणियों को दुख न देवूं—ऐसा भाव होता है, इसे व्यवहार में रक्षा करना कहा जाता है। अन्य प्राणियों को मेरी तरफ से अभय है, मेरे से उन्हें दुःख न हो, ऐसा अभयदान का भाव आता है। अन्य प्राणियों को

आत्मा समान देखकर उनके प्रति अभय भाव नहीं आवे तो तीनों दान व्यर्थ हैं। आहारदान से भूख का भय दूर होता है, औषधदान से रोग का भय और शास्त्रदान से मूर्खता का भय नष्ट होता है। इसलिये अभयदान सब में उत्कृष्ट दान है। मेरे से किसी को भय न हो—ऐसा भाव धर्मात्मा को आता ही है। उसके अनन्तानुबन्धी का अभाव है, इसलिये किसी के प्रति वैर न हो, ऐसी वृत्ति धर्मात्मा को होती ही है।

भावार्थः—अभय अर्थात् भय न होना। यदि आहार, औषध तथा शास्त्रदान करने से भूख, रोग और मूर्खता जनित भय दूर होते हैं तो तीनों दान अभयदान के आधीन हैं, इसलिये अभयदान सब दानों में उत्तम है। समस्त प्राणी परमात्मा समान हैं—ऐसी बुद्धि हुये बिना आहार, ज्ञान तथा औषधदान यथार्थ नहीं होते, इसलिये अभयदान उत्कृष्ट दान है।

गाथा-१२

आहारात्सुखितौषधादिततरां निरोगता जायते।
शास्त्रात्पात्रनिवेदितात्परभवे पाण्डित्यमत्यद्भ तम्॥
एतत् सर्वगुणप्रभापरिकरः पुंसोऽभयाद्दानतः।
पर्यंते पुनरुन्नतोन्नतपदप्राप्तिर्विमुक्तिस्ततः ॥१२॥

सम्यग्दृष्टि औषधिदान के फल से चक्रवर्ती, बलदेव आदि का पद प्राप्त कर मुक्त होते हैं।

समस्त आत्मा, परमात्मा समान हैं, ऐसे भानवाले को अभयदान का भाव आता है। मुनि, श्रावक, ब्रह्मचारी, सम्यक्त्वी आदि सत्पात्रों को आहार देने के फलस्वरूप इन्द्र, चक्रवर्ती, बलदेव आदि पदों की प्राप्ति होती है। सम्यक्त्वी को राग और उसके फल की इच्छा नहीं होती। अच्छा किसान घास के लिये खेती नहीं करता किन्तु जहाँ सौ मण अनाज हो, वहाँ घास सहज ही होगा; उसी प्रकार धर्मात्मा शुद्धभाव की नजर रखता है, इसलिये उसे जहाँ धर्म होता है, वहाँ पुण्य भी सहज ही होगा। मिथ्यादृष्टि को तीर्थंकर, बलदेव आदि पद नहीं मिलते किन्तु वह मुनि, ब्रह्मचारी, श्रावक को आहारदान आदि के

फलस्वरूप भोगभूमि में जन्म लेता है। भोगभूमि में जुगलिया-भाई-बहन के रूप में जन्म लेते हैं और वे पति-पत्नी होते हैं, उन्हें व्यापार उद्योग नहीं करना पड़ता, वहाँ कल्पवृक्ष होते हैं, वहाँ के मनुष्यों की तीन पल्योपम की आयु होती है। यहाँ धर्मात्मा के लिये कथन है, वे स्वभाव की निधि का अवलोकन करते हैं। अहो! आत्मा ज्ञानस्वभाव है, ऐसे ज्ञानवाले को शुभराग आते हैं, इससे चक्रवर्ती आदि पद की प्राप्ति होती है। दस हजार गायों को गन्ना खिलाते हैं, उनका दूध हजार गायों को पिलाया जाता है, उन हजार गायों का दूध सौ गायों को पिलाया जाता है। इस प्रकार करते हुये सबसे अच्छे दूध की खीर बनाई जाती है, जिसका एक कौर (ग्रास) भी करोड़ों पैदल (सैनिक) नहीं पचा सकते—ऐसी खीर का भोजन चक्रवर्ती करते हैं।

प्रद्युम्नकुमार सोलह वर्ष की उम्र में क्षुल्लक वेश बनाकर अपनी माता (रुक्मणि) के पास आये। जो केसरिया लाडु सिर्फ वासुदेव ही पचा सकते थे, उनको प्रद्युम्नकुमार पचा जाते हैं। तत्पश्चात् वे अपना असली स्वरूप प्रकट करते हैं और कहते हैं कि मैं तुम्हारा पुत्र हूँ। प्रद्युम्नकुमार कामदेव थे, छह खंड में उनके समान किसी का रूप नहीं, किन्तु वे भी सबकुछ छोड़-छाड़कर मुनि बनकर मोक्ष गए। पहले औषधिदान दिया, उसके फल में उन्हें ऐसा शरीर मिला था। तीर्थंकर भगवान का जन्म होने पर इन्द्र उनके शरीर को हजार नेत्र से देखते हुए भी तृप्त नहीं होता। उन्होंने पूर्वभव में ऐसा पुण्यार्जन किया था, जिसके फलस्वरूप ऐसा शरीर मिला।

श्री कुन्दकुन्द आचार्य ने अपने पूर्वभव में मुनि को शास्त्रदान दिया था। उनके पूर्वभव की कथा है कि एक बार सारे जंगल में आग लग गई, वहीं शास्त्र की पेटी थी किन्तु उन्होंने प्राणों की चिन्ता न करते हुए उसकी रक्षा की और बड़ी भक्तिपूर्वक वे शास्त्र, मुनि को दिये। इसी दान के फल में श्रेष्ठ पुत्र हुए (कुन्दकुन्द हुए)। मुनि हुए बाद में ऋद्धि प्राप्त हुई और विदेहक्षेत्र में गये। वहाँ आठ दिन तक भगवान की वाणी अपने कानों से

सुनने का शुभावसर मिला। बाद में परमागम रचे, इसी कारण मंगलाचरण में उनका तीसरा स्थान है।

''मंगलम् भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोस्तु मंगलम्॥''

जिसने अपने पूर्व भव में शास्त्र का अनादर किया हो, उसकी बुद्धि इस जन्म में अल्प-विकसित होती है। उसे व्यापार सम्बन्धी बात भले ही याद रहे किन्तु आत्मा की बात याद नहीं रहती। यह सब पूर्व भव में शास्त्र की अमान्यता, अपमान किए, उनका फल है। ज्ञानदान से मूर्खता का नाश होता है। देखो! दिगम्बर मुनि आत्मा में झूल रहे थे। उन्हें लगा कि जीव संसारचक्र में भटक रहे हैं, उनके लिए शास्त्र रचना करूँ और उन्होंने शास्त्र रचना की। श्रीमद् रायचन्द जी ने इसे 'अमृत शास्त्र' कहा है।

समस्त आत्मा पूर्ण स्वभावी हैं—ऐसे भानसहित जो दूसरों को अभयदान देता है, उसे सुख और निरोगता मिलती है। चक्रवर्ती आदि उत्तम पद प्राप्त होकर अन्त में मुक्ति मिलती है। अतः उत्तमोत्तम सुख, निरोगता आदि गुणों के इच्छुक जीवों को चार प्रकार का दान करना चाहिए। श्रावक अवस्थारूपी दुकान में शुभभाव का व्यापार होता है। **क्रमशः**

साभार : आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष 14, अंक 2

श्री हुकमचन्दजी भारिल्ल के लिये पूज्य गुरुदेवश्री के मंगल आशीर्वाद स्वरूप स्वतः निकले हृदयोद्गार

पण्डित हुकमचन्द के बारे में तो हमने कहा था कि उसका क्षयोपशम बहुत है, बहुत है। वर्तमान तत्त्व की प्रभावना में उसका बड़ा हाथ है, स्वभाव का भी सरल है।

अच्छा मिल गया, टोडरमल स्मारक को अच्छा मिल गया। गोदीका के भाग्य से मिल गया, गोदीका भी पुण्यशाली है न, सो मिल गया।

तत्त्व की बारीक से बारीक बात पकड़ लेता है, पण्डित हुकमचन्द बहुत ही अच्छा है।

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल द्वारा पूज्य गुरुदेवश्री के लिये गये इन्टरव्यू का कुछ अंश

'अब हम क्या चर्चा करें?' उक्त शब्द पूज्य कानजीस्वामी ने तब कहे जब उनसे कहा गया कि आपसे कुछ लोग चर्चा करना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि आप जो प्रतिपादन करते हैं, उसके संबंध में उभयपक्षीय चर्चा करके सत्यासत्य का निर्णय किया जाये।

अपनी बात को स्पष्ट करते हुए स्वामीजी बोले – 'भाई! अब हम किसी से क्या चर्चा करें? हमने तो कभी किसी से वाद-विवाद किया ही नहीं। 22 वर्ष की उम्र में घर छोड़ा था, आज 66 वर्ष होने को आये। 23 वर्ष स्थानकवासी संप्रदाय में रहे, 43 वर्ष दिगंबर धर्म स्वीकार किये हो गये। आज तक किसी से विवाद किया नहीं। अब......

बीच में ही टोकते हुए जब मैंने कहा – 'इसमें क्या है? यदि अब तक नहीं किया तो न सही, पर यदि चर्चा करने से तत्त्व का सही निर्णय हो जावे तो चर्चा करने में क्या हर्ज है?

तब अत्यंत गंभीरता से बोले – ''तत्त्वनिर्णय वाद-विवाद से नहीं होता। तत्त्व-निर्णय दिगंबर जिनवाणी के अध्ययन, मनन, चिंतन एवं आत्मा के अनुभव से होता है। कविवर पंडित बनारसीदासजी ने कहा है न :-

सदगुरु कहें सहज का धंधा, वाद-विवाद करे सो अंधा।

– नाटक समयसार

खोजी जीवे वादी मरे – ऐसी सांची कहवत है।

नियमसार परमागम में आचार्य कुन्दकुन्द भी कहते हैं :-

णाणाजीवा णाणाकम्मं णाणाविहं हवे लद्धी।
तम्हा वयणविवादं सगपरसमएहिं वज्जिज्जो।।156।।

अर्थात् जगत में नाना प्रकार के जीव हैं। उनकी नाना प्रकार की लब्धियाँ हैं और उनके नाना प्रकार के कर्म हैं। इसलिये चाहे वह स्वमत का हो या परमत का, किसी के साथ भी वचन-विवाद नहीं करना चाहिये। वाद-विवाद से पार पड़नेवाली नहीं है। यह तो हम पहिले से ही जानते थे। अत: हम

तो सदा इससे दूर ही रहे, वाद-विवाद में कभी पड़े ही नहीं।

जब वे रुके तो मैंने तत्काल कहा - 'प्रश्न, वाद-विवाद का नहीं, चर्चा करने का है। वाद-विवाद में मत पड़िये। कौन कहता है कि आप वाद-विवाद में पड़िये? पर आप तत्त्व-चर्चा से क्यों इंकार करते हैं?

चर्चा तो यहाँ प्रतिदिन होती है, शाम को 45 मिनिट। पर जिस तरह की चर्चा की लोग बात करते हैं, वह तत्त्व-चर्चा नहीं, वह वीतराग चर्चा नहीं। वह तो वाद-विवाद ही है। वे लोग बात तो चर्चा की करते हैं और करना चाहते हैं वाद-विवाद। ●

पूज्य गुरुदेवश्री के डॉ: हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रति उद्गार

पूज्य गुरुदेवश्री : अपना माने तो न! जगत की चीज़ है तो जगत में होती है। हुकमीचन्दजी है न पण्डित? बहुत जोरदार जगा है। हुकमीचन्दजी पण्डित अभी बहुत जोरदार। उम्र छोटी ४० वर्ष की है, परन्तु उनका क्षयोपशम और वास्तविक की रुचि बहुत, तथापि घमण्ड नहीं, मान नहीं। आ गये न अभी वे। बहुत नरम व्यक्ति नरम। पच्चीस हजार रुपये देने लगे उन्हें, कहा नहीं? भोपाल में चालीस हजार लोगों की संख्या थी व्याख्यान में। भोपाल, भोपाल पंचकल्याणक था न, हम गये थे न, आठ दिन रहे थे। चालीस हजार लोग सभा में। उसमें एक व्यक्ति ने पच्चीस हजार... दिये थे एक व्यक्ति ने, पद्मचन्द आगरावाले। पैसेवाले हैं न। नाम नहीं दिया। उत्तर (प्रदेश) मुमुक्षु मण्डल की ओर से आपका आदर करके पच्चीस हजार (रुपये) देते हैं। दिया था एक लाख। लिये पच्चीस हजार हाथ में। ३९ वर्ष की उम्र। मैं तो इन महाराज से सीखा हूँ, मुझे तो महाराज का उपकार है। ऐसा करके सौ रुपये डालकर पच्चीस हजार वापस दे दिये। पच्चीस हजार। धूल में क्या था वहाँ? पच्चीस हजार और लाख। थैली हाथ में ली। थैली में दिये। नोट होंगे। मुझे तो महाराज का उपकार है, मैं तो यहाँ से सीखा हूँ। ऐसा करके सौ रुपये डाले। उत्तर (प्रदेश) मुमुक्षु मण्डल को मैं भेंटरूप से वापस देता हूँ। पच्चीस हजार नहीं। नरम व्यक्ति है। पाँच सौ वेतन है, छह सौ करते थे तो इनकार किया। अधिकार करना नहीं। मैं जितना काम करूँगा, उतना दाम लूँगा। अधिक

करके वापस बहुत काम कराना... इतना बस है। वह भी लडक़े तैयार होंगे तो मैं छोड़ देनेवाला हूँ। बड़े लडक़े हैं। बड़े लडक़े का नाम परमात्मप्रकाश है, छोटे लडक़े का नाम अध्यात्मप्रकाश है। लड़कियों के नाम ऐसे नाम हैं। वह कुछ नाम है, भूल गये। वे सब अध्यात्म के नाम हैं। आहाहा! अरे... भाई! ऐसा समय कहाँ मिले? आहाहा! ●

अब हम सबको दादा बनना होगा

–प्रो. वीरसागर जैन, दिल्ली

दादा को श्रद्धांजलि समर्पित करने का सबसे अच्छा तरीका, खासकर उनके हम सभी विद्यार्थियों के लिए तो यही है कि अब हम ही दादा बनने का प्रयास प्रारम्भ कर दें। यही समय की आवश्यकता है। यही उनको दी जाने वाली गुरु दक्षिणा भी है, यही एक मात्र उपाय है, इसके बिना अन्य कोई उपाय नहीं है। उनके जाने से हुई महाक्षति को इसी प्रकार कुछ संभाला जा सकता है। अन्यथा सब समाप्त हो जाएगा। दादा सूर्य थे। जिस प्रकार सूर्य जाता है तो दीपक जलाया जाता है, पर एक दीपक नहीं, हजारों-लाखों दीपक जलाये जाते हैं। सूर्य तो एक जाता है, पर दीपक एक नहीं जलाया जाता है, दीपक तो हजारों-लाखों जलाये जाते हैं। दादारूपी सूर्य के जाने पर अब हम उनके सभी एक हजार शिष्य रूपी दीपकों को जलना होगा, हम सबको ही कुछ अंशों में दादा बनना होगा। यद्यपि मैं मानता हूँ कि दादा बनना आसान नहीं है, लेकिन असम्भव भी नहीं है। दादा स्वयं अनेक बार कहते थे कि तुम मुझसे भी आगे निकल सकते हो यदि परिश्रम करो तो, मैं भी कोई पूर्व से ही अपने साथ कुछ अतिरिक्त लेकर नहीं आया हूँ, सब यहीं परिश्रम करके प्राप्त किया है। हमें दादा के इस कथन से प्रेरित होकर आज दादा बनने का उद्यम प्रारम्भ करना ही होगा।

दादा बनने के लिए मेरी दृष्टि में हमें निम्नलिखित ५ कार्य करने होंगे-

१. हमें अपना जरा भी समय-शक्ति इधर-उधर बर्बाद नहीं करना होगा, पूरी तरह ज्ञानाराधना में ही समर्पित रहना होगा। हम सभी जानते हैं कि दादा किस तरह सर्व सांसारिक कार्यों से पूरी तरह दूर रहते थे, कभी एक मिनट भी बर्बाद नहीं करते थे। कभी कहीं बाजार आदि में भी नहीं जाते थे। जेब में रूपये ही नहीं रखते थे। निरंतर अध्ययन, लेखन आदि में ही लगे रहते थे।

२. हमें लेखक भी बनना होगा। लेखक ही नहीं, श्रेष्ठ लेखक बनना होगा, सरल-सुबोध और अत्यंत उपयोगी साहित्य लिखना होगा। यह बहुत आवश्यक है।

३. हमें वक्ता भी बनना होगा। वक्ता ही नहीं, प्रभावशाली वक्ता बनना होगा। आकर्षक शैली में गम्भीर तत्त्वज्ञान परोसने की कला सीखनी होगी। यह भी बहुत आवश्यक है। यद्यपि हम सब वक्ता हैं, पर अभी इस दिशा में भी बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता है।

४. हमें चिन्तक भी बनना होगा। चिन्तक ही नहीं, तार्किक चिन्तक बनना होगा। मैंने स्वयं रात को बारह-बारह बजे तक उनके पास बैठकर देखा है कि वे लगातार कितना गूढ़ चिन्तन करते थे। एवं चेत एवं स्यात, एवं कथंचित् स्यात की भाषा में लगे ही रहते थे। उनका अध्ययन भी व्यापक था। उसमें रुचि भी बहुत गहरी थी। वे सदा ज्ञान में रत और संतुष्ट थे।

५. हमें अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान रखना होगा। जरा भी लापरवाही नहीं करनी होगी। दादा अपने स्वास्थ्य के प्रति भी अत्यंत जागरूक थे। हम भी प्रमाद, चिन्ता, लोभ आदि त्याग कर एवं उचित आहार-विहार के द्वारा अपने स्वास्थ्य का ध्यान रख सकते हैं। ●

सुखी होने का उपाय

स्वयं को जानो, पहिचानो और स्वयं में ही जम जाओ, रम जाओ, सुखी होने का एकमात्र यही उपाय है।

हुकमचन्द शास्त्री

गुरुदेव श्री कानजी स्वामी का आदरणीय दादा श्री के ऊपर अगाध स्नेह और भरपूर वात्सल्य था। साथ ही यह दृढ़ विश्वास की, पण्डित हुकमचंद इस आध्यात्मिक तत्त्वज्ञान की पताका को हर घर में लहरा देगें। ये जैनशासन उनके हाथों में सुरक्षित रहेगा... आदि। ये समस्त बातें दादा श्री की उस योग्यता को बताती हैं कि उन्होंने अपने आप को हर क्षण साबित किया है कि वे इस तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार के योग्य उत्तराधिकारी हैं। यदि हम भी अपने गुरुजनों के इतने विश्वासपात्र बन सकें कि वे हमारे हाथों में जैनशासन सौपकर निश्चिंत हो सकें तब हमारा जीवन भी सार्थक हो जाएगा। ●

तत्त्ववेत्ता की तत्त्वसभा

सोनू जैन, उप निदेशक, इसरो, दिल्ली

सभी के जाने का दिन निश्चित है
जानने को तो यह जानते हैं सभी
औरों के संदर्भ में स्वीकार भी करते हैं
किंतु आत्मीयजनों के वियोग पर
क्यों हम इतने विह्वल हो जाते हैं

हमारा आजीवन विमर्श
कि मैं कहीं आने-जाने वाला तत्त्व नहीं
जाना तो पराश्रित कथन है पर की अपेक्षा लिए हुए
स्वाश्रय में तो आने-जाने का अवकाश ही नहीं
अपने लिए तो सदैव उपस्थित हूं मैं स्थिर ,ध्रुव, सत्तारूप

मैं कहीं आता-जाता कहां,
अपने में ही तो रहा अनादि से
अपने में ही रहता हूं अभी, और
अपने में ही रहूंगा अनंत काल तक

कहीं आने-जाने की बात मुख्य करके तुम
अनादि-निधन सत्य को बौना तो नहीं कर रहे
मुझे विश्वास है तुम इस सत्य को बौना नहीं करोगे
मैंने यही सत्य तो जिया, पिया और पिलाया तुम्हें

यदि यह अनादि-निधन सत्य मुख्य है तुम्हें
तो फिर मैं इस सत्य के रूप में तुम्हारे पास ही हूं सदैव
क्योंकि इसी सत्य के कारण तो जुड़े हम
और सत्य रहेगा तो जुड़े रहेंगे हम अनंतकाल तक

उस वक्त भी तो मैंने यहीं स्मरण कराया
निकट उपस्थित परिजनों और पुरजनों को
स्वरूप से पलायन करने वाला तत्त्व नहीं हूँ मैं
आहार, जल, औषधि, उपचार से जीने वाला तत्त्व नहीं हूँ मैं

मेरी प्रतिक्रियाएं जल्दी जाने की इच्छा
और अधिक रुकने की वांछा के लिए नहीं थी।
स्वद्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव में स्थित मैं
कभी आया ही नहीं, न जाऊंगा कहीं

शोक में न गिरने का मेरा अंतिम संबोधन
तत्त्व के प्रति मेरी निष्ठा की अभिव्यक्ति थी
वह निष्ठा जिसकी झलक में तुम सभी में देखता हूँ
वह निष्ठा जिसका सहस्रों बार संकल्प लिया तुमने

तत्त्ववेत्ता कहते रहे न तुम मुझे
क्या शोक तुम्हें शोभा देता
अनादि–निधन तत्त्व के आराधकों को
समीचीन श्रद्धांजलि शोकसभा नहीं तत्त्वसभा है।

संकल्प

मङ्गलार्थी समकित शास्त्री

भाग १ – दादा के पिता का संकल्प

आओ चलते कुछ समय पूर्व, संकल्प लिया जिसने अपूर्व।
सुत को विद्वान बनाने का, जिन शासन ध्वज फहराने का।
सपने बड़े जिसे दिखते हैं, इतिहास वही तो लिखते हैं।
अर बात जहां हो वीरो की, चिंता न उन्हें हो पीरों की।।
पर विधि लीला होती अजीब, असबाब न था उनके नसीब।
छोटा सा था व्यवसाय एक, खर्चे थे बहुतेरे अनेक।
पर नाम था उनका हुकमचंद, कैसे पड़ सकता भाग्य मंद।
पढ़ना उनकी नस नस में था, विद्वान पना रग रग में था।
एड़ी चोटी का जोर लिए, पितु ने भी संकट मोड़ दिये।
था खून पसीना एक किया, पुत्रों को पढ़ने भेज दिया।
मेहनत भले ही मजबूरी थी, पर शिक्षा भी तो ज़रूरी थी।
आशीष पिता का साथ में ले, संकल्प पिता का हाथ मे ले।।
जिनकी संघर्ष भरी गाथा, वे हैं हम सबके ही दादा।
संघर्ष भरा तट पर किया, और पिता स्वप्न साकार किया।।

भाग २ – दादा का संकल्प

संकल्प पिता का हुआ पूर्ण, पर कथा अभी भी है अपूर्ण।
वे अपना पौरुष साथ लिए, कुछ और नया उत्साह लिए।
चल पड़े हाथ में थाम धर्म, जीवन का बस अब यही मर्म।
जिनश्रुत उतार निज सीने में, बदला मकसद अब जीने में।।
जितनी भी सांसे अब लूंगा, सब जैन धर्म को झोंकूँगा।
गुरुदेव से पाया अध्यातम, में भी हूं सिद्धों सा आतम।
पर कालसर्प ठहरा अतिथि, कब डसे किसी को आस न थी।
जिस पर मुमुक्षु गण हुए फिदा, गुरुदेव ने जब ली महा विदा।।
अब तक जो तत्व रँगीली थी, वह आंख विरह से गीली थी।
जीवन के थे जो धर्म पिता, मेरे समक्ष चल रही चिता।
गुरु का श्रम व्यर्थ नहीं होगा, भावुकता को मन से रोका।
अश्रु प्रवाह अब अल्प किया, सामने तभी संकल्प लिया।।
जब तक शरीर में रक्त शेष, हर क्षण होगा मेरा विशेष।
आत्मानुभूति की राह लिए, जिन तत्व प्रचार प्रवाह लिए।
सच है, जो लक्ष्य साथ लेता, अर रीति नीति अपना लेता।
कर जीवन मे सिद्धांत अमल, नर वह ही होता पूर्ण सफल।।
विद्वान सैकड़ों निर्मित कर, तन मन सब जीवन अर्पित कर।
आखिर पूरा कर के वादा, तुम धन्य धन्य छोटे दादा।
आखिर पूरा करके वादा, शत शत है नमन तुम्हें दादा।।

● ● ●

समन्वय के पाँच सूत्र

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

- भूतकाल को भूल जाओ, इसकी चर्चा मत करो।
- भविष्य के लिए कोई शर्त मत रखो।
- वर्तमान में जो जहाँ है, वहीं रहकर अपना कार्य करे।
- जिन पाँच प्रतिशत बातों में असहमति है, उन्हें अचर्चित रहने दो, उनके सम्बन्ध में मौन रहो।
- जिन बातों में पूर्ण सहमति है, उनका मिलकर या अलग-अलग रहकर जैसे भी सम्भव हो प्रचार करो।

छोटे दादा

(डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल)

अभिषेककुमार जैन, देवराहा

जीवन के संघर्षों से, विचलित न महापुरुष होते।
धारायें जिन्हें न बदल सके वे हुकमचन्द भारिल होते।।

जो जैन धर्म के प्रबल पारखी, वक्ता, लेखक, कवि हुए।
सरल तार्किक, तत्त्ववेत्ता, हुकमचन्द भारिल्ल हुए।।

जिन्हें हजारों वृक्षों का, वटवृक्ष कहें तो सत्य ही है।
और बताया आगम का रस, सहज रहो सब सहज ही है।।

जिन्हें देखकर महापुरुष के अभिनन्दन का गौरव होता।
जिनकी एक झलक मानो, सागर सी प्यास त्वरित हर लेता।।

कई हजारों हुए प्रभावित, जिनकी जीवन धारा जीके।
आज दिवाकर फिर जा बैठा, पश्चिम के शिखरों के पीछे!!

• • •

आदरणीय दादाजी द्वारा रचित अंतिम पद्य रचना

आकुलता-व्याकुलता क्यों?

हे सर्वज्ञ जिनेश्वर! जब सभी जानते हो तुम।
हम यह जाने अर माने फिर भी इतने व्याकुल क्यों?
तुमने बतलाया जग को सबकुछ आगे-पीछे का।
इकदम नक्की है सबका फिर क्यों यह आकुलता है।।१।।

जिसका जब जो होना है वह ही होगा तब ही तो।
उसमें अदला-बदली कुछ कभी नहीं हो सकती।।
यह भी तुमने जाना है एवं जग को बतलाया।
फिर भी जग में कुछ भी तो इस पर विश्वास न आया।।२।।

आदर्श गुरुवर : डॉ० हुकमचन्द भारिल्ल

पण्डित सुधीर शास्त्री
निदेशक, तीर्थधाम मङ्गलायतन

वर्तमान काल में पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के द्वारा हुई आध्यात्मिक क्रान्ति जिसके द्वारा यथार्थ तत्त्व को उद्घाटित किया गया है, उसके प्रचार-प्रसार में सम्पूर्ण जीवन लगाकर उस वटवृक्ष को रोपा-सींचा-पल्लवित किया, जिसका परिणाम आज **पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर** है। आपश्री पूज्य गुरुदेवश्री के अनन्य भक्त तो थे ही परन्तु सम्यक् तत्त्व को आत्मसात् करके पूज्य गुरुदेवश्री के सामने ही सोनगढ़ में रहकर निरन्तर कक्षाएँ लेते थे।

पूज्य गुरुदेवश्री अपने प्रवचनों में आपकी तारीफ किया करते थे, आपके द्वारा लिखित **क्रमबद्ध पर्याय** एवं **धर्म के दशलक्षण** कृतियाँ बेजोड़ हैं, जिसकी प्रशंसा स्वयं गुरुदेव किया करते थे।

आपने शिष्यों को शिष्य ही नहीं वरन् गुरु बनने का मार्ग बताया। हमें गर्व है कि हम आपके शिष्य हैं। मैंने 1991 में पण्डित टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय में प्रवेश लिया था। प्रथम परिचय, जब दादा विदेश से वापिस आये थे, तब हुआ था। इसके पहले उनका नाम सुना था। जब भी मिला करते मुस्कराकर प्रसन्नता व्यक्त किया करते थे। आपका जीवन आदर्शमय रहा है। निरन्तर जिनवाणी का पठन-पाठन के अलावा कोई दूसरा कार्य नहीं।

सभी जीव तत्त्वज्ञान से जुड़े सुखी होवे यही भावना रहती थी।

मूलभूत सिद्धान्तों की मर्यादाओं को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए वे कभी नहीं झुके, कभी नहीं रुके। आपने न केवल समाज की सेवा की है, वरन स्वयं का जीवनदान भी किया है। मनसा, वाचा और कर्मणा की त्रिवेणी के रूप में आदरणीय छोटे दादा ने जैन जगत और मानव समाज को जो चेतना दी है, वह कैसे भुलाई जा सकती है ? उनका साहित्य, शान्त शैली और सरल भाषा में भगवान महावीर के सिद्धान्तों को बताया है।

आपकी हार्दिक इच्छा थी कि विद्यालय से निकलनेवाला प्रत्येक विद्यार्थी

आत्मार्थी हो, सदाचारी हो और वह समाज का प्रतिनिधित्व कर सके। पण्डितों को तैयार करना जितना जरूरी है, उससे अधिक उनमें प्रतिनिधित्व की क्षमता का विकास करना है। अत: आपने विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के विकास के लिए चहुँमुखी प्रक्रिया को अपनाया और आपको इसमें पूरी सफलता भी मिली है। ऐसे विराट व्यक्तिव को नमन... नमन... नमन.... ●

श्रेष्ठ कलाकार डॉ. भारिल्ल

स्मारक में आदरणीय छोटे दादाजी के प्रवचन सुनकर मन एकदम प्रफुल्लित हो उठता, आपके प्रवचन सुनकर मन मयूर नाच उठता, क्योंकि आपके प्रवचन की शैली ही कुछ इस प्रकार हुआ करती थी कि प्रवचन से उठकर जाने का भी मन नहीं हुआ करता था। आपकी शैली में ओज, प्रवाह, स्पष्टवादिता एकदम सरल, स्पष्ट, तर्कपूर्ण होने के कारण विषय एकदम सरल–स्पष्ट होने के कारण बात सीधी हृदय में बैठती थी।

स्मारक में आदरणीय छोटे दादाजी से सक्रिय रूप से जुड़ने पर हजारों विद्यार्थियों ने अपनी प्रतिभा को निखारा। उन्हीं में से मैंने भी अपनी प्रतिभा को आपके साथ जुड़कर व ब्रह्मचारी यशपालजी (अन्नाजी) के साथ अपनी प्रतिभा को निखारा।

आज मैं जो कुछ भी हूँ वह स्मारक का ही प्रतिफल है। आपकी दूरदर्शिता, निर्णय लेने की क्षमता व निरन्तर चिन्तन, लेखन यह आपकी अद्वितीय कला है। आपने 'जीवन जीने की कला' व 'समाधिमय मरण' की कला दोनों ही 'सहज' रीति से सिखलायीं। सच्चे अर्थों में मेरे जीवन में आपकी अमिट छाप है जो जीवनभर नहीं भुलायी जा सकती। आपने माँ जिनवाणी की सेवा में सम्पूर्ण जीवन समर्पित किया, अत: आप माँ जिनवाणी के सच्चे सपूत थे। निश्चित् ही आपका जीवन सभी के लिए आदर्श व अनुकरणीय है। हम चलें आपके कदमों पर....

आप शीघ्र ही सिद्धशिला में शोभित हों ऐसी पवित्र भावना के साथ विराम।●

डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, तीर्थधाम मङ्गलायतन

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के धारावाही प्रवचन

द्वितीय अधिकार के सार पर प्रवचन

मोक्षमार्ग में अर्थात् भगवान सर्वज्ञ परमेश्वर के मार्ग में मुख्य अभिप्राय केवलज्ञानादि गुण सम्पन्न आत्मा का स्वरूप समझाने का है। आत्मा अनन्त ज्ञान आदि गुणों से सम्पन्न है। वह पुण्य-पाप के राग से सम्पन्न नहीं है। शुद्धज्ञान, शुद्ध दर्शन, शुद्ध आनन्द आदि अनन्त पवित्रता के पिण्ड से भगवान आत्मा भरा हुआ है। ऐसे आत्मस्वभाव का अनुभव करने से मोक्षमार्ग का प्रारंभ होता है; परन्तु राग की क्रिया करने से धर्म-मोक्षमार्ग होता है ऐसा नहीं है, यह समझाने का हेतु है।

जैसे सुवर्ण की पहिचान कराने के लिए सोने के अलावा पीतल आदि का स्वरूप बतलाना आवश्यक है कि जो कसरदार है, वह सोना है, पीतल और अन्य वस्तु हल्की होती है। सोने का टुकड़ा छोटा होने पर भी वजनी होता है, इससे सोना अन्य धातुओं से पृथक् पड़ जाता है (जाना जा सकता है।) उसीप्रकार चैतन्यमूर्ति आत्मा कसदार (वजनी) सोने जैसा है और पुण्य-पाप के विकल्प तो पीतल जैसे हैं तथा शरीर, मन, वाणी तो काँच के टुकड़े जैसे हैं। इसप्रकार उनकी पहिचान होवे तो सोने के कंद समान आनन्दनाथ (भगवान आत्मा) को (रागादि-शरीरादि से) भिन्न पाड़ा (किया) जा सकता है।

इसीप्रकार जैसे हीरे की परख करने के लिये हीरे और काँच के टुकड़े का स्वरूप पहिचानना पड़ता है, तभी काँच के टुकड़े से भिन्न हीरे को परखा जा सकता है। उसीप्रकार श्रीगुरु जीव पदार्थ को पहिचानने के लिए जीवपदार्थ के अलावा अजीव पदार्थ का स्वरूप भी बतलाते हैं कि जिसके द्वारा आत्मा को दृढ़रूप से अजीव से भिन्न करके अनुभव किया जा सके। यह सोना है और यह पीतल आदि इससे भिन्न है, यह हीरा है और यह काँच का टुकड़ा आदि हीरा से भिन्न है। उसी प्रकार यह चैतन्य हीरा है और शरीर

तथा रागादि चैतन्य से भिन्न है ऐसा दृढ़ भेदज्ञान कराने के लिए यहाँ श्रीगुरु ने अजीव का स्वरूप भी समझाया है।

अजीवतत्त्व जीवतत्त्व से सर्वथा भिन्न है। जीव का लक्षण तो चेतन है और अजीव का लक्षण अचेतन है। देह, मन, वाणी और पुण्य-पाप में अचेतन लक्षण है। उनमें चेतन लक्षण नहीं है। इसलिए वे जीव नहीं है। शुभराग है वह भी स्वयं अपने को नहीं जानता और चैतन्य को भी नहीं जानता, इसलिये उसको भी अचेतन कहा गया है। शुभराग पर के द्वारा ज्ञात होता है, वह स्वयं नहीं जानता अपितु चैतन्य के द्वारा वह ज्ञात होता है। राग में अपने को जानने की भी ताकत नहीं है। दया, दान, व्रत, भक्ति आदि राग स्वयं को नहीं जानता, तो उसके द्वारा चैतन्य तो कहाँ से जाना जा सकेगा? राग को जानना दूसरे के द्वारा होता है। अर्थात् रागरहित चैतन्य द्वारा राग ज्ञात हो-ऐसी चीज है। इसलिए राग को अचेतन अथवा अजीव कहते हैं।

एकबार संवत् 1963 में शरीर की सत्रह वर्ष की उम्र में बड़ौदा जाना हुआ था। वहाँ एक 'भूलभूलैया' है, जिसमें से बाहर निकलने का रास्ता बताने के लिए एक व्यक्ति को खड़ा रखना पड़ता है। ऐसा भूलभूलैया का रास्ता है कि बाहर निकलने की सूझ ही नहीं पड़ती। उसीप्रकार उपवास करने से धर्म होता है, दया से धर्म होता है, दान से धर्म होता है ऐसी अनेक क्रियाओं से धर्म माननेरूप मिथ्यात्व की भूलभूलैया ऐसी है कि उसमें से कैसे बाहर निकलना, वह अज्ञानी को नहीं सूझता। उसको श्रीगुरु छूटने का मार्ग बताते हैं कि 'शरीर, विकल्प और राग यह कोई मेरा स्वरूप नहीं है' इसप्रकार इनसे पृथक् हो तो बाहर निकल सकेगा, अन्य कोई उपाय नहीं है।

'सरोवर किनारे रे हिरण प्यासा रे..अरे रे! सच्चा पानी उसको नहीं मिलता रे लाल...पुण्य की क्रिया में ज्ञान का पानी नहीं मिलता भाई..। मृगजल में जल नहीं मिलता। अनादि से इसके पीछे दौड़-दौड़कर मर रहा है। अब मन के हिरण को वापिस मोड़ना रे...पुण्य-पाप की क्रिया में

आसक्त मन को वापस मोड़ बापा ! वहाँ पानी नहीं, भाई ! वहाँ धर्म नहीं। राग की क्रिया को जानने वाला ज्ञान राग से भिन्न है। वह ज्ञान ही तेरा स्वरूप है, उसे पहिचान तो धर्म होगा। राग में तेरा चेतन का लक्षण नहीं है, इसलिए उसको अपने से भिन्न जान।

'चेतता नर सदा सुखी है' –ऐसा कहा जाता है न ! राग से और पुण्य से भिन्न पड़ता आत्मा सदा सुखी है। लोगों ने शब्द तो बराबर रखे है कि 'चेतता अर्थात् जागता नर सदा सुखी', परन्तु भाव को नहीं समझते हैं। जीव और पुद्गल को भिन्न पाड़नेवाला चेतता नर है। पुद्गलरूपी है और जीव अरूपी है। पुद्गल खण्ड-खण्ड सहित है और जीव तो अखण्ड है। (आत्मा) चैतन्यमूर्ति अरूपी अखण्ड अभेद कतली है। प्रत्येक आत्मा ऐसा अखण्ड और अरूपी है। सब होकर एक आत्मा नहीं है।

पुद्गल की तरह पुण्य-पाप भी सखंड है। क्षण में गलते हैं और क्षण में मिलते हैं ऐसे ये भाव भी भावपुद्गल हैं। मुख्यरूप से जीव को संसार परिभ्रमण में पुद्गल ही निमित्त कारण है। उपादान तो जीव का अपना है परन्तु जीव पुद्गल का लक्ष्य करके 'यह मेरा है' ऐसा मानता है यह इसको संसार-परिभ्रमण का कारण होता है। वह पर की चीज को अपने से खता लेता है –मान लेता है, इसलिए उसके फल में संसार में घूमना पड़ता है। जैसे विवाह के अवसर पर दूसरों के यहाँ से पहिनने के लिए मोती का हार लाये हों उसको अपनी सम्पत्ति में गिन लें तो ?वह चोर ही है, दंड का पात्र है। उसीप्रकार जो पुद्गल को निज मानता है, वह चोर है, उसको संसार की जेल मिलती है।

विवाह के अवसर पर सोने का कड़ा आदि पहिनने को स्त्रिया ले जाती है न ! हमारे घर में ही मेरी दीक्षा के पश्चात् छोटे भाई का विवाह था। तो सोने का कड़ा पहिनने को लाए होंगे और वह चोरी हो गया। अब लोग तो सोने की चोरी होने को अपशुकन मानते हैं और बनाव ऐसा बना कि दो वर्ष पश्चात् भाई मर गया। इसलिए लोगों को बहम पड़ जाता है; परन्तु तेरा चैतन्य का

सोना लुट रहा है –यह महा अपशुकन है। आनन्द का नाथ चैतन्य भगवान राग और पुण्य को निज मानकर चोर हो रहा है।

मोक्ष अधिकार में आता है कि पर की वस्तु को निज माननेवाला चोर है। दया, दान, व्रतादि के विकल्पों को निज माननेवाला चोर है। शास्त्र में अनेक उपमायें, दृष्टान्त, सिद्धान्त देकर जीव को जगाने का प्रयत्न किया है; परन्तु यह जगे तो हो न! जो मोह की निद्रा में.. ऐसी गहरी नींद में सोया हो, वह कैसे जागे ?

जैसे खाट (पलंग) पर सोया हुआ मनुष्य (पलंग के) उन आठ पायों से पृथक् है। उसी प्रकार आत्मा आठ कर्म और पुण्य-पाप से पृथक् है। जीव तो अन्दर में निराला सत् चिदानन्द प्रभु है; परन्तु अज्ञानी उसको नहीं जानता हुआ 'जीव संयोग में पुद्‌गलमय शरीर से बँधा है और आत्मकर्मों से सर्वात्मप्रदेशों में जकड़ा हुआ है इसकारण मानो मैं शरीर और कर्म से बँध गया हूँ,' ऐसा मानता है; परन्तु वस्तु कभी बँधती नहीं है। तू तो मात्र भावबंध से बँधा है। तेरी वस्तु तो अबद्धस्पृष्ट है।

क्रमशः

मई 2023 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

4 मई – वैशाख शुक्ल 14
चतुर्दशी

11 मई – ज्येष्ठ कृष्ण 6
श्री श्रेयांसनाथ गर्भ कल्याणक

12 मई – ज्येष्ठ कृष्ण 7 / 8
अष्टमी

14 मई – ज्येष्ठ कृष्ण 10
श्री विमलनाथ गर्भ कल्याणक

16 मई – ज्येष्ठ कृष्ण 12
श्री अनंतनाथ जन्म-तप कल्याणक

18 मई – ज्येष्ठ कृष्ण 14 **चतुर्दशी**
श्री शान्तिनाथ जन्म-तप-मोक्ष कल्याणक

19 मई – ज्येष्ठ कृष्ण 15
श्री अजितनाथ गर्भ कल्याणक

23 मई – ज्येष्ठ शुक्ल 4
श्री धर्मनाथ मोक्ष कल्याणक

24 मई – ज्येष्ठ शुक्ल 5
श्रुतपंचमी

28 मई – ज्येष्ठ शुक्ल 8

श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान का स्वरूप

पण्डित कैलाशचन्द्रजी कहते हैं—

नैरन्तर्येण यः पाठः क्रियते सूरि सन्निधौ।
यद्वा सामायिकी पाठः स्वाध्यायः स स्मृतो बुधैः ॥

अर्थात् आचार्य महाराज के समीप बैठकर निरन्तर शास्त्रों का पाठ करने को अथवा सामायिक के पाठ करने को विद्वान लोग स्वाध्याय नामक तप कहते हैं। **(लाटी संहित, 85)**

स्मृतिकार मनु कहते हैं—

लौकिक वैदिकञ्चापि तथाध्यात्मिकमेव च।

अर्थात् चाहे लौकिक ज्ञान हो, चाहे वैदिक ज्ञान हो, चाहे आध्यात्मिक सम्बन्धी ज्ञान हो, इनमें सबसे प्रथम आध्यात्मिक ज्ञान को ग्रहण करना चाहिए अर्थात् आध्यात्मिक ज्ञान ही सर्वश्रेष्ठ है, वही प्रमाण है। उसी से मनुष्यों को आत्मा का आभास होता है। **(मनुस्मृति, 2/117)**

आचार्य वीरसेन कहते हैं—

अंगंगबाहिरआगमवायण-पुच्छणाणुपेहा परियट्टण-धम्मकहाओ सज्झायो णाम।

अर्थात् अंग और अंगबाह्य आगम की वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, परिवर्तना और धर्मकथा करना, स्वाध्याय नाम का तप है।

(धवला पुस्तक, 13, पृ. 64)

आचार्य सोमदेव कहते हैं—

अनुयोगगुणस्थान - मार्गणास्थानकर्मसु।
अध्यात्मतत्त्वविद्यायाः पाठः स्वाध्याय उच्यते॥

अर्थात् चारों अनुयोगों के शास्त्र, गुणस्थान, मार्गणास्थान और अध्यात्म तत्त्वरूप विद्या का पढ़ना, स्वाध्याय है। **(उपासकाध्यन, 915)**

यहाँ स्वाध्याय के स्वरूप को अनेक प्रकार से समझाया गया है, लेकिन सबका सार यही है कि 'स्व' की मुख्यता से ही स्वाध्याय करना श्रेष्ठ है।

इस प्रकार यह स्वाध्याय के स्वरूप का वर्णन पूर्ण हुआ।

स्वाध्याय के भेद-प्रभेद

स्व आत्मा के लिए हितकर शास्त्रों का अध्ययन स्वाध्याय है, क्योंकि समीचीन शास्त्रों के स्वाध्याय से कर्मों का संवर एवं निर्जरा होती है और 'सु' अर्थात् सम्यक् शास्त्रों का अध्ययन स्वाध्याय है।

अब यहाँ स्वाध्याय के भेद गिनाते हैं।

आचार्य उमास्वामी कहते हैं—

वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः।

वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय और धर्मोपदेश — ये पाँच प्रकार के स्वाध्याय है। **(मोक्षशास्त्र, अध्याय 9, सूत्र 25)**

वाचना : निर्दोष ग्रंथ, उसका अर्थ तथा दोनों का भव्य जीवों को श्रवण करना, सो वाचना है।

पृच्छना : संशय को दूर करने के लिए अथवा निश्चय को दृढ़ करने के लिए प्रश्न पूछना, सो पृच्छना है।

— अपना उच्चपन प्रकट करने के लिए, किसी को ठगने के लिए, किसी को हराने के लिए, दूसरे का हास्य कराने के लिए आदि खोटे परिणामों से प्रश्न करना सो पृच्छना, स्वाध्याय नाम का तप नहीं है।

अनुप्रेक्षा : जाने हुए पदार्थों का बारम्बार चिंतवन, सो अनुप्रेक्षा है।

आम्नाय : निर्दोष उच्चारण करके पाठ को घोखना सो आम्नाय है।

धर्मोपदेश : धर्म का उपदेश करना सो धर्मोपदेश है।

प्रश्न : ये पाँच प्रकार के स्वाध्याय किसलिए कहे हैं?

उत्तर : प्रज्ञा की अधिकता, प्रशंसनीय अभिप्राय, उत्कृष्ट उदासीनता, तप की वृद्धि, अतिचार की विशुद्धि इत्यादि के कारण ये पाँच प्रकार के स्वाध्याय कहे गए हैं।

ये सभी स्वाध्याय के भेद नहीं अपितु सम्यक् प्रकार से स्वाध्याय करने की विधि है। इन पाँचों पूर्वक ही हमें स्वाध्याय करना चाहिए। **क्रमशः**

''जिस प्रकार–उसी प्रकार'' में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– सूर्य उगता है, उसमें कोई ऐसा विचार करे कि यह सूर्य झट अस्त हो जाये तो ठीक और झट उगे तो ठीक। कम सूर्य हो तो ठीक और बढ़े तो ठीक, उसके सारे विकल्प झूठे है, ज्ञानी ऐसा कभी नहीं सोचता।

उसी प्रकार– ज्ञानी को संसार में सभी द्रव्यों की होने वाली अवस्थाओं को देखकर यह विकल्प नहीं आता कि ऐसा क्यों हो रहा है? ज्ञानी को पर वस्तुओं का परिणमन अनुकूल अथवा प्रतिकूल भासित नहीं होता।

जिस प्रकार– बबूल की जड़ को पानी देने से बबूल का फल प्राप्त होता है और आम की जड़ को पानी देने से आम का फल प्राप्त होता है।

उसी प्रकार– चैतन्य मूर्ति आत्मा धर्म का मूल है। उसकी रुचि का पोषण करने से मोक्ष प्राप्त होता है और पुण्य–पाप भाव से संसार में परिभ्रमण होता है।

जिस प्रकार– मोर अण्ड़े के छिलके में से उत्पन्न नहीं होता बल्कि उसके अन्दर रस में से उत्पन्न होता है।

उसी प्रकार– चैतन्य मूर्ति आत्मा में मोक्ष की शक्ति भरी है उस शक्ति में से मोक्ष प्रगट होता हैं। पुण्य–पाप तो छिलके के समान है।

जिस प्रकार– छिलके को तोड़कर मोर प्रगट होता है।

उसी प्रकार– पुण्य–पाप के भावों को भेद कर आत्मा देखने से, स्थिर होने से मोक्ष प्रगट होता है।

जिस प्रकार– अग्नि ईंधन को जला डालती है।

उसी प्रकार– आत्मा में पैदा हुआ परमानन्द हमेशा से चले आए प्रचुर कर्मों को जला डालता है।

जिस प्रकार– सूर्य में अन्धकार का अभाव है।

उसी प्रकार– चैतन्य सूर्य की ज्ञान ज्योति में पुण्य–पाप रूपी अन्धकार का अभाव है।

जिस प्रकार– जीभ अन्दर गुफा में पड़ी है। उसके ऊपर पुलिस रूपी दांत लगाये हैं। उसके उपर होंठ रूपी ताला लगाकर बंद किया है। इतनी प्रतिकूलतायें होने पर भी जीभ अपना चखने का स्वभाव नहीं छोड़ती।

उसी प्रकार– तू ज्ञायक स्वभाव आत्मा है। अनन्त प्रतिकूल संयोग भी आ जाये तो भी तू अपना स्वभाव छोड़ता ही नहीं।

क्रमशः संकलन – प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की

समाचार-दर्शन

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन का
21वाँ साक्षात्कार शिविर सम्पन्न

तीर्थधाम मङ्गलायतन : यहाँ संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन का नवीन प्रवेशार्थियों के प्रवेश हेतु इक्कीसवाँ साक्षात्कार शिविर दिनांक 26 मार्च 2023 से 31 मार्च 2023 तक सम्पन्न हुआ। जिसमें इन्दौर से पधारे श्री अनुभव जैन; शिवपुर से श्री नरेश जैन; सागर से श्री रतनचन्द नायक, पण्डित शैलेन्द्र शास्त्री; दिल्ली से श्री राजीव जैन; श्री अनिल जैन परिवार बुलन्दशहर आदि महानुभावों की उपस्थिति में अनेक कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

मुम्बई से पधारे पण्डित जे.पी. दोशी ने मंगल प्रज्ञा के आधार पर प्रवेशार्थी बच्चों की कक्षा; डॉ. योगेशचन्द्र जैन, अलीगंज; पण्डित सचिन जैन द्वारा वर्तमान में जैन संस्कारों की आवश्यकता विषय पर स्वाध्याय द्वारा तत्त्वज्ञान का लाभ दिया। मङ्गलार्थी अनिल जैन पथरिया; शान्तनु जैन, ग्वालियर; सिद्धान्त करेली आदि मङ्गलार्थी छात्रों द्वारा 'मङ्गलायतन की वर्तमान में उपयोगिता' विषय पर विशेष वार्ता। कक्षा, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि का संचालन किया गया।

वर्तमान मङ्गलार्थी छात्रों द्वारा 'अकर्तावाद' नामक सारगर्भित नाटक का मंचन भी किया गया।

कार्यक्रम के प्रथम दिन शिविर की आवश्यकता और उपयोगिता पर पण्डित अशोक लुहाड़िया एवं विद्यानिकेतन की विशेषताएँ-साक्षात्कार शिविर की प्रक्रिया सम्बन्धी डॉ सचिन्द्र शास्त्री द्वारा उद्बोधन दिया गया। कार्यक्रम का संचालन उपप्राचार्य पण्डित समकित जैन द्वारा किया गया। इस प्रकार औपचारिक उद्घाटन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

प्रवेशार्थी शिविर में 24 सुयोग्य मङ्गलार्थी छात्रों का चयन निष्पक्ष चयन प्रक्रिया धार्मिक परीक्षा व लौकिक परीक्षा डी.पी.एस. में आयोजित की गयी। अन्तिम दिन 31 मार्च को श्री स्वप्निल जैन द्वारा मङ्गलार्थी छात्रों एवं अभिभावकों को महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ प्रदान की गयीं।

इस अवसर पर भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के प्राचार्य डॉ. सचिन्द्र शास्त्री द्वारा सभी मङ्गलार्थी एवं अभिभावकों को मङ्गलार्थी बनने की शपथ ग्रहण करायी गयी।

षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित

नौवीं पुस्तक की वाचना 7 फरवरी 2023 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम – आदरणीय बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी भाई–बहिनों तथा मङ्गलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त होता है।

दोपहर	01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन)	**षट्खण्डागम (धवलाजी)**
रात्रि	07.30 से 08.30 बजे तक	मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय
	08.30 से 09.15 बजे तक	**समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्चारण सहित सामान्यार्थ**

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,
Password - tm@4321
youtube channel - theerthdham mangalayatan
के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

नवीन संस्करण का प्रकाशन

तीर्थधाम मङ्गलायतन : साहित्य प्रकाशन की शृंखला में **मङ्गल भक्ति सुमन** का भारी माँग पर पुन:प्रकाशन किया गया है। जिसमें देव–शास्त्र–गुरु को समर्पित अद्वितीय पाँच सौ भक्तियों के संकलन के साथ प्राचीन कवियों के भजन, बड़े पण्डितजी द्वारा रचित आध्यात्मिक पाठों का अनूठा संग्रह का पुन: प्रकाशन किया है। **जिसकी कीमत मात्र 80.00 रुपये है।**

साथ ही दैनिक पूजन–पाठ के संकलन के साथ **मङ्गल अर्चना** का भी पुन: प्रकाशन का कार्य चल रहा है। जिसमें समस्त पूजनों का संग्रह किया जा रहा है।

पुस्तकें सीमित होने से आप अतिशीघ्र अपनी प्रतियाँ सुरक्षित कर लेवें।

सम्पर्कसूत्र–
पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800; डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, 7581060200
पण्डित अभिषेक शास्त्री, 7610009487
Email : info@mangalayatan.com

तीर्थधाम मङ्गलायतन से प्रकाशित एवं उपलब्ध साहित्य सूची

मूल ग्रन्थ–
1. समयसार वचनिका
2. प्रवचनसार (हिन्दी, अंग्रेजी)
3. नियमसार
4. इष्टोपदेश
5. समाधितंत्र
6. छहढाला (हिन्दी, अंग्रेजी सचित्र)
7. मोक्षमार्ग प्रकाशक
8. समयसार कलश
9. अध्यात्म पंच संग्रह
10. परम अध्यात्म तरंगिणी
11. तत्त्वज्ञान तरंगिणी
12. हरिवंशपुराण वचनिका
13. सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन
1. प्रवचनरत्न चिन्तामणि
2. मोक्षमार्गप्रकाशक प्रवचन
3. प्रवचन नवनीत
4. वृहद्द्रव्य संग्रह प्रवचन
5. आत्मसिद्धि पर प्रवचन
6. प्रवचनसुधा
7. समयसार नाटक पर प्रवचन
8. अष्टपाहुड़ प्रवचन
9. विषापहार प्रवचन
10. भक्तामर रहस्य
11. आतम के हित पंथ लाग!
12. स्वतंत्रता की घोषणा
13. पंचकल्याणक प्रवचन
14 मंगल महोत्सव प्रवचन
15. कार्तिकेयानुप्रेक्षा प्रवचन
16. छहढ़ाला प्रवचन
17. पंचकल्याणक क्या, क्यों, कैसे?
18. देखो जी आदीश्वरस्वामी
19. भेदविज्ञानसार
20. दीपावली प्रवचन
21. समयसार सिद्धि
22. आध्यात्मिक सोपान
23. अमृत प्रवचन
24. स्वानुभूति दर्शन
25. साध्य सिद्धि का अचलित मार्ग
26. दशधर्म प्रवचन
27. वह घड़ी कब आयेगी
28. अहो भाव!

पण्डित कैलाशचन्द्रजी का साहित्य
1. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला (भाग 1 से 7) (हिन्दी गुजराती)
2. मंगल समर्पण
3. मंगल पत्रांजलि
4. मंगल संबोधन
5. मंगल दैनन्दिनी
6. मंगल देशना

अन्य
1. फोटो फ्रेम (पूज्य गुरुदेवश्री, बहिनश्री)
2. **सी.डी.**
3. मंगल भक्ति सुमन
4. मंगल उपासना
5. करणानुयोग प्रवेशिका
6. धन्य मुनिदशा
7. धन्य मुनिराज हमारे हैं!
8. प्रवचनसार अनुशीलन
9. पंडित टोडरमल
10. वस्तुविज्ञानसार
11. अध्यात्मत्रिपाठ संग्रह

बाल साहित्य (कॉमिक्स)
1. कामदेव प्रद्युम्न
2. बलिदान
3. मंगल प्रज्ञा (भाग 1, 2, 3)
4. मंगल शासन (भाग 1, 2)
5. मंगल प्रभावना (भाग 1, 2)

उपरोक्त साहित्य सभी मन्दिरों, ट्रस्ट, संस्थानों, विद्यालयों, पुस्तकालयों को स्वाध्यायार्थ निःशुल्क दिया जायेगा। – डाकखर्च आपका रहेगा।

सम्पर्क –

सम्पर्कसूत्र–पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800; पण्डित अभिषेक शास्त्री, 9997996346

Email : info@mangalayatan.com

श्रीमान सद्धर्मानुरागी बन्धुवर,

सादर जयजिनेन्द्र एवं शुद्धात्म सत्कार!

आशा है आराधना-प्रभावनापूर्वक आप सकुशल होंगे।

वीतरागी जिनशासन के गौरवमयी परम्परा के सूत्रधार पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रभावनायोग में निर्मित आपका अपना **तीर्थधाम मङ्गलायतन** बीस वर्षों से, सुचारुरूप से, अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर गतिमान है।

वर्तमान काल की स्थिति को देखते हुए, अब **मङ्गलायतन** का जीर्णोद्धार एवं अनेक प्रभावना के कार्य, जैसे-भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन, भोजनशाला, **मङ्गलायतन** पत्रिका प्रकाशन आदि कार्यों को सुचारू रूप से भी व्यवस्था एवं गति प्रदान करना है। यह कार्य आपके सहयोग के बिना, सम्भव नहीं हैं। इसके लिए हमने एक योजना बनायी है, जिसमें आपको एक छोटी राशि प्रतिमाह दानस्वरूप प्रदान करनी होगी। इस योजना का नाम - **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** रखा गया है। हम आपको इस महत्त्वपूर्ण योजना में सम्मानित सदस्य के रूप में शामिल करना चाहते है। **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** में आपको प्रतिमाह, कम से कम मात्र एक हजार रुपये दानस्वरूप देने हैं। (सदस्यता फार्म पृष्ठ 34 पर है।)

भारत सरकार ने **मङ्गलायतन** को किसी भी रूप में दी जानेवाली प्रत्येक दानराशि पर, आयकर अधिनियम की धारा 80-G के अन्तर्गत छूट प्रदान की है। आप इस महान कार्य में सहभागिता देकर, स्व-पर का उपकार करें।

आप इसमें स्वयं एवं अपने परिवारीजन, इष्टमित्र आदि को भी सदस्य बनने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। साथ ही **तीर्थधाम मङ्गलायतन** द्वारा संचालित होनेवाले कार्यक्रमों में, आपकी सहभागिता, हमें प्राप्त होगी।

आप यथाशीघ्र पधारकर यहाँ विराजित जिनबिम्बों के दर्शन करें एवं यहाँ वीतरागमयी वातावरण का लाभ लेवें - ऐसी हमारी भावना है।

हार्दिक धन्यवाद एवं जयजिनेन्द्र सहित

अजितप्रसाद जैन	**स्वप्निल जैन**	**सुधीर शास्त्री**
अध्यक्ष	महामन्त्री	निदेशक

मङ्गल वात्सल्य-निधि

सदस्यता फार्म

नाम ....

पता ....

.... पिन कोड ....

मोबाइल .... ई-मेल ....

मैं **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** योजना की सदस्यता स्वीकार करता हूँ और मैं .... राशि जमा करवाऊँगा / दूँगा।

हस्ताक्षर

''चौथाई ग्रास दान भी अनुकरणीय''

ग्रासस्तदर्धमपि देयमथार्धमेव,
तस्यापि सन्ततमणुव्रतिना यथर्द्धिः।
इच्छानुसाररूपमिह कस्य कदात्र लोके,
द्रव्यं भविष्यति सदुत्तमदानहेतुः॥

अर्थात् गृहस्थियों को अपने धन के अनुसार एक ग्रास अथवा आधा ग्रास अथवा चौथाई ग्रास अवश्य ही दान देना चाहिए। तात्पर्य यह है कि हमें ऐसा नहीं समझना चाहिए कि जब मैं लखपति या करोड़पति हो जाऊँगा, तब दान दूँगा; बल्कि जितना धन हमारे पास है, उसी के अनुसार थोड़ा-बहुत दान अवश्य देना चाहिए।

– आचार्य पद्मनन्दि : पद्मनन्दि पञ्चविंशतिका, श्लोक 230

यह राशि आप निम्न प्रकार से हमें भेज सकते हैं –

1. बैंक द्वारा

NAME	:	SHRI ADINATH KUNDKUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	:	PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	:	RAILWAY ROAD, ALIGARH
A/C. NO.	:	1825000100065332
RTGS/NEFTS IFS CODE	:	PUNB0001000
PAN NO.	:	AABTA0995P

UPI
BHIM UPI Payments Accepted at
SHRI ADINATH KUND KUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST
Account Number : 1825000100065332, IFSC Code: PUNB0001000

2. Online : http://www.mangalayatan.com/online-donation/

3. ECS : Auto Debit Form के माध्यम से।

21वें प्रवेश पात्रता शिविर की झलकियाँ

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मुनिराज और सर्वज्ञ में भेद नहीं

मुनिराज इस प्रकार परिणमित हो गये हैं, **मानो वीतरागता की मूर्ति हों! राग-द्वेष के अंशरहित मात्र वीतरागता की मूर्ति हैं मुनिराज!** मुनि को तो तीन कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है, उन मुनिराज को शान्ति का सागर उछलता है। भगवान आत्मा स्वभाव से वीतरागमूर्ति है और **मुनिराज तो पर्याय में वीतराग की मूर्ति हैं।** श्री नियमसार के कलश में तो कहा है कि अरेरे ! हम जड़मति हैं कि मुनिराज में और सर्वज्ञ में भेद मानते हैं। **अहाहा! मुनिराज तो मानों साक्षात् वीतराग की मूर्ति हों, इस प्रकार परिणमित हो गये हैं; उन्हें मुनि कहते हैं।**

(– द्रव्यदृष्टि जिनेश्वर, ८९२, पृष्ठ २०४)

पं. सं. : DELBIL/2001/4685

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक :** डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन।

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)

Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust
Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)

Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22
info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com